ICSSR Sponsored
ISSN: 2319-9997

Journal of Nehru Gram Bharati University, 2025; Vol. 14 (II):362-367

इक्कीसवीं सदी के हिन्दी उपन्यासों में आदिवासी जीवन की धार्मिक मान्यताएँ

गौरव एवं भूप नारायण

हिन्दी विभाग,नेहरू ग्राम भारती मानित विश्वविद्यालय, प्रयागराज

Received: 07.10.2025 *Revised: 23.11.2025* *Accepted: 05.12.2025*

सारांश

इक्कीसवीं सदी के आदिवासी उपन्यासों में पारम्परिक आदिवासी मान्यताओं का चित्रण किया गया है, जिनमें प्रकृति, वन और पूर्वजों की पूजा का मुख्य विधान है। इन उपन्यासों में अलौकिक शक्तियों और चमत्कारों में आदिवासी समुदाय के गहरे विश्वास को भी दर्शाया गया है। ये उपन्यास विवाह पद्धतियों पौराणिक मिथकों और प्राकृतिक पूजा से जुड़े अनुष्ठानों का वर्णन करते हैं, जो आदिवासी संस्कृति की पहचान है। उपन्यास में व्याप्त अंधविश्वासों को भी दर्शाया गया है, जो पारम्परिक मान्यताओं का अभिन्न अंग है। उपन्यासकार धार्मिक मान्यताओं में आ रहे परिवर्तनों अंधविश्वासों और अन्य धर्मों के प्रभाव को चित्रित करते हैं जो आदिवासियों के जीवन में नई चुनौतियाँ पैदा करते हैं।

बीज शब्द- *आदिवासी, पारम्परिक, पौराणिक, संस्कृति, समुच्चय, शोषण*

प्रस्तावना-:

भारत एक ऐसा देश है जिसे उसके सर्वधर्म समभाव और धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक मूल्य पूरे विश्व में विशिष्ट स्थान प्रदान करते हैं। भारतीय संविधान प्रत्येक नागरिक को यह अधिकार देता है कि वह अपनी धार्मिक आस्था के अनुसार जीवन जी सके, अपने धर्म का पालन कर सके और उसे स्वतंत्र रूप से अभिव्यक्त कर सके। यहाँ हिन्दू, मुसलमान, बौद्ध, ईसाई अथवा कोई अन्य धार्मिक समुदाय सभी को समान अधिकार और सम्मान प्राप्त हैं।

फिर भी, आज भी समाज के कुछ वर्गों में धर्म के नाम पर कमजोर और आर्थिक रूप से वंचित लोगों का शोषण किया जा रहा है। विशेष रूप से धर्म के कुछ प्रचारक निर्धन, अशिक्षित और ग्रामीण वर्गों की सामाजिक एवं आर्थिक विवशताओं का फायदा उठाकर उन्हें अपने मूल धर्म से विचलित कर जबरन या प्रलोभन के माध्यम से धर्मांतरण की ओर प्रेरित करते हैं। यह केवल उनकी धार्मिक पहचान को बदलने की कोशिश नहीं है, बल्कि उनके सांस्कृतिक मूल्यों,

आत्मिक विश्वासों और सामाजिक जड़ों को छिन्न-भिन्न करने जैसा कृत्य है।

इस संदर्भ में एक विचारक की टिप्पणी अत्यंत प्रासंगिक है- "आज धर्म, चाहे वह हिन्दू हो, मुसलमान, ईसाई या बौद्ध-सभी में एक संरचनात्मक शोषण तंत्र के रूप में परिवर्तित होता जा रहा है। पुरोहित, मुल्ला, मौलवी और पादरी जैसे धार्मिक नेतृत्वकर्ता- जिनमें से कई स्वार्थी, चरित्रहीन और सत्ता के समक्ष नतमस्तक रहने वाले होते हैं आमजन को धर्म के नाम पर भय और विनम्रता में डुबोकर उन्हें सत्ता, सरकार और पूंजीपतियों की आज्ञाकारिता सिखाते हैं।"1 डॉ. किरण टण्डन की यह मान्यता इस विषय को और अधिक स्पष्ट करती है- "धर्म, वास्तव में, विभिन्न सांस्कृतिक परंपराओं, विश्वास प्रणालियों और आचार संहिता का वह समुच्चय है, जिसे समाज अपनी पूर्वज पीढ़ियों से एक सामाजिक विरासत के रूप में ग्रहण करता है और जो जीवन की कठिनाइयों का सामना करने हेतु उसे मानसिक संबल प्रदान करता है।"2

यदि हम विशेष रूप से आदिवासी समाज की धार्मिक मान्यताओं और विश्वास प्रणालियों पर दृष्टि डालें, तो यह स्पष्ट होता है कि उनके लिए धर्म केवल पूजा-पाठ या कर्मकांड तक सीमित नहीं है, बल्कि वह एक जीवन पद्धति है, जो प्रकृति से गहराई से जुड़ी हुई है। आदिवासी समुदाय प्रकृति को ईश्वर का स्वरूप मानते हैं और उसमें ही दिव्यता की अनुभूति करते हैं। उनके देवता न किसी मंदिर में विराजमान हैं और न ही ग्रंथों में सीमित, बल्कि वे जंगलों, नदियों, पहाड़ों, सूर्य, चंद्रमा और धरती के प्रत्येक जीव-निर्जीव रूप में विद्यमान हैं।

सूर्य की उपासना

भारत हो या विश्व का कोई अन्य भूभाग प्रकाश का विशेष महत्व हर समाज में रहा है, और यह प्रकाश मुख्य रूप से सूर्य से प्राप्त होता है। हिन्दू धर्म में सूर्य को देवता का स्थान प्राप्त है। इसी प्रकार, भारत के आदिवासी समुदाय भी सूर्य को ईश्वर का रूप मानते हैं और उसकी उपासना करते हैं। वे सूर्यदेव को 'सिंगबोंगा' के रूप में जानते हैं। मुण्डा जनजाति के अनुसार, उनका सर्वोच्च देवता भी सूर्य ही है। यही सिंगबोंगा हैं, जिनका दूसरा नाम 'हड़म' भी कहा जाता है।

हड़म को सृष्टि का सृजनकर्ता माना जाता है- जिसने पृथ्वी, आकाश, सूर्य, चंद्रमा और मानव की रचना की। वह एक साकार और सजीव ईश्वर हैं, जिन्हें पहले पुरुष ने स्वयं देखा था। यही कारण है कि किसी भी महत्वपूर्ण कार्य की शुरुआत आदिवासी समाज में सिंगबोंगा की अनुमति और आशीर्वाद से होती है। उनका विश्वास है कि यदि सिंगबोंगा अप्रसन्न हो जाएं, तो विपदाएँ आ सकती हैं। इसलिए वे संकट की घड़ी में सुरक्षा, उन्नति और कृपा हेतु उनसे प्रार्थना करते हैं। मंगल सिंह मुण्डा के एक उपन्यास में एक पात्र द्वारा सिंगबोंगा से प्रार्थना करते हुए दृश्य प्रस्तुत है-

"अरे यह क्या? इतनी तेज आवाज कहाँ से आ रही है? भूकंप? नहीं... यह तो बिजली

की चमक है! लेकिन आकाश तो बिल्कुल साफ है। बिना बादल के बिजली कैसे चमक सकती है? अरे यह तो आग का गोला है! आग का गोला हवा में तैरता कैसे? मैं गया, अब तो मृत्यु निश्चित है। यह तो कोई अग्निवाण लगता है। ज़रूर किसी जादूगर ने चलाया है। हे सिंगबोंगा, संपूर्ण सृष्टि के अधिपति! मुझे इस अग्निकांड से बचा लो। इस समय तू ही मेरा एकमात्र सहारा है। तू सूर्यदेव को आदेश दे कि वर्षा हो जाए। हे प्राणपति, जगपति, त्रिलोकनाथ सिंगबोंगा! मेरी पुकार सुन। मैं तुझसे जीवन की याचना कर रहा हूँ। आ, शीघ्र आ और मेरा उद्धार कर...!''3

मुण्डा समुदाय के लोग सिंगबोंगा देवता पर अत्यधिक आस्था रखते हैं। संकट, विपत्ति या शुभ कार्यों के अवसर पर वे पूर्ण श्रद्धा से उनसे प्रार्थना करते हैं। इस भावना का एक और सजीव उदाहरण लेखक विनोद कुमार शुक्ल के उपन्यास 'गायब होता देश में देखने को मिलता है-

''हे सिंगबोंगा! हे देव राजा ! तुम्हारा ही अस्तित्व इस संपूर्ण सृष्टि की सुदृढ़ नींव है। तुमने ही किया। तुम्हारी चेतना सम्पूर्ण प्रकृति में प्रतिबिंबित शून्य आकाश और प्रवाहमान जल को एक व्यवस्था प्रदान की। तुमने ही चेतन और अचेतन का निर्माण होती है। तुम ही प्रथम उषा हो, पहला सूर्य। तुम्हारी शुभ्रता शुद्ध दूध की भांति झरती है, और श्वेत धुंध की भांति फैल जाती है। तुम ही इस जगत के नियंता हो। हे दसिमाने सिंगबोंगा! हे देव राजा! तुम मुण्डाओं के पितामह हो- हमारे मार्गदर्शक। हर स्थान पर उपस्थित, सब पर दृष्टि रखने वाले। हे देव राजा! तुम हमारे शुभचिंतक हो, कृपया अपना आशीर्वाद बनाए रखो।"4

इस प्रकार, सिंगबोंगा केवल एक देवता नहीं, बल्कि मुण्डा और अन्य आदिवासी समुदायों की धार्मिक चेतना, प्रकृति- आस्था और सांस्कृतिक अस्तित्व के प्रतीक हैं। वे प्रकृति की शक्तियों के प्रति श्रद्धा और संबंध का जीवंत रूप हैं, जिनके बिना उनके जीवन की कल्पना अधूरी है।

प्रकृति-:

आदिवासी समुदाय मूलतः प्रकृति को पूज्य मानता है। उनकी जीवनशैली वनों, जलस्रोतों और भूमि पर निर्भर करती है, इसलिए उनका आध्यात्मिक और सांस्कृतिक विश्वास इन्हीं प्राकृतिक तत्वों के इर्द-गिर्द घूमता है। ''आदिवासी जन प्राचीन काल से ही वनों की उपासना करते आए हैं, क्योंकि उनके लिए वृक्ष मात्र जीवित संरचनाएँ नहीं, बल्कि आराध्य देवताओं के समान होते हैं। उनके धार्मिक विश्वास क्षेत्रीय संस्कृति के अनुरूप होते हैं, जो उनकी परंपरागत जीवन दृष्टि को दर्शाते हैं। ये समुदाय पर्वतीय क्षेत्रों में खेती कर अपने जीवनयापन के लिए अन्न उपजाते हैं। अधिकतर आदिवासी लोग मांसाहार और मदिरा का सेवन करते हैं। उनका समग्र जीवन प्राकृतिक संसाधनों के साथ गहरे जुड़ाव पर आधारित होता है और वे अपने पूर्वजों की परंपराओं व सामाजिक नियमों का श्रद्धापूर्वक पालन करते हैं।''5 महुआ माजी के उपन्यास

'मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ' में आदिवासी समाज की प्रकृति के प्रति गहरी निष्ठा और श्रद्धा का सजीव वर्णन किया गया है।

उपन्यास में वर्णित एक प्रसंग में दादाजी (ततंग) अपने पोते सगेन को पत्थरों का विशेषज्ञ बनाना चाहते हैं। 'सगेन' का नाम उसके दादाजी ने रखा था, जिसका अर्थ है ''फुनगी'' वह कोमल शाखा जो किसी पौधे की चोटी पर नई पत्तियों के साथ उगती है। यह नाम एक प्रतीक था- उसकी वंशवृक्ष को आगे बढ़ाने की आशा। राजीव रंजन प्रसाद के उपन्यास 'आमचो बस्तर' में भी आदिवासी संस्कृति की प्रकृति-निष्ठा का गहरा चित्रण मिलता है। दंतेवाड़ा स्थित दंतेश्वरी मंदिर न केवल धार्मिक आस्था का केंद्र है, बल्कि इसे धरती और प्रकृति को देवी के रूप में भी पूजा जाता है। उपन्यास का पात्र मिकाम अपने विचार साझा करते हुए कहता है कि "उनके लिए धरती और प्रकृति ही असली धर्म हैं।"6 वह खुद को केवल हिंदू कहलाने से इंकार करता है, क्योंकि वह मानता है कि उनके समुदाय की धार्मिक पहचान विशिष्ट है। भले ही देवी-देवताओं, तंत्र और अनुष्ठानों का स्वरूप मुख्यधारा से अलग प्रतीत हो, फिर भी वे गहराई से जुड़ी परंपराओं को दर्शाते हैं। मिकाम कहता है कि' ''धर्म कोई नकल योग्य व्यवस्था नहीं है, और जरूरी नहीं कि उनके सिंग (देवता) हिंदू देवताओं से मिलते-जुलते हों।''7 बस्तर क्षेत्र की परंपरा में देवी दंतेश्वरी का एक मातृप्रधान देव परिवार है, जिसमें भैरवदेव, पाटदेव, और भीमादेव जैसे देवताओं की महत्वपूर्ण भूमिका है।

पूर्वजों के प्रति आदिवासी समाज की श्रद्धा-:

आदिवासी समाज में पूर्वजों के प्रति गहरी आस्था और सम्मान की परंपरा सदियों से जीवित रही है। उनके जीवन का प्रत्येक पहलू पूर्वजों की स्मृति और आशीर्वाद से जुड़ा होता है। ''आदिवासी मान्यता है कि उनके पूर्वज केवल अतीत की धरोहर नहीं, बल्कि आज भी उनके आसपास एक अदृश्य सजीव उपस्थिति में विद्यमान हैं। इस विश्वास के चलते वे प्रत्येक महत्त्वपूर्ण कार्य चाहे वह त्योहार हो, कृषि कार्य की शुरुआत, विवाह हो या शिशु का जन्म- पूर्वजों को स्मरण किए बिना आरंभ नहीं करते।''8

जादू-:टोना और अंधविश्वास-

आदिवासी समुदायों में जादू-टोने की अवधारणा आज भी व्यापक रूप से प्रचलित है। इन समुदायों के बीच यह धारणा गहराई से जुड़ी है कि किसी भी आपदा या संकट को तंत्र-मंत्र, झाड़-फूंक और अनुष्ठानों के माध्यम से दूर किया जा सकता है। चाहे बीमारी हो, कृषि में नुकसान हो या पशुओं की आकस्मिक मृत्यु इन सबका समाधान वे ओझा या तांत्रिकों से ही प्राप्त करना उचित मानते हैं। उनका विश्वास होता है कि अलौकिक शक्तियाँ जैसे भूत-प्रेत, चुड़ैल आदि मनुष्य के जीवन पर प्रभाव डालती हैं, और उनसे बचाव केवल टोनाटोटका या देवी-देवताओं की पूजा के द्वारा ही संभव है।

इस अंधभक्ति और अज्ञान का सबसे भयावह रूप तब देखने को मिलता है जब किसी स्त्री पर ''डायन'' होने का आरोप लगाया जाता है। कई बार सामाजिक द्वेष या भूमि विवादों के चलते प्रभावशाली लोग कमजोर महिलाओं को निशाना बनाकर उन पर टोटके का दोष मढ़ देते हैं। ऐसे आरोपों के पीछे अक्सर सत्ता, संपत्ति और पितृसत्तात्मक सोच होती है, जिससे महिलाओं को शोषण और उत्पीड़न का सामना करना पड़ता है।

संजीव के उपन्यास 'धार' में इस सामाजिक विकृति का मार्मिक चित्रण किया गया है। उपन्यास में दर्शाया गया है कि जब गाँव में एक फैक्ट्री खुलने के बाद कुछ मवेशियों की मृत्यु होती है, तो एक व्यक्ति ओझा के पास जाकर इसे किसी जादुई कारण से जोड़ता है। ओझा, जिसे महेन्द्र बाबू कहा गया है, एक अनुष्ठान के माध्यम से यह कहता है कि ''यह सब मैना की माँ की वजह से हो रहा है क्योंकि वह 'डायन' है।''9 गाँव के लोग उस स्त्री को चारों ओर से घेर लेते हैं, उस पर अत्याचार करते हैं और अंततः उसे गाँव छोड़ने पर मजबूर कर देते हैं। स्त्री बार-बार अपने निर्दोष होने की दुहाई देती है, लेकिन किसी पर कोई असर नहीं होता।

बलि प्रथा-:

आदिवासी समाज में अपने आराध्य देवी-देवताओं और पूर्वजों को खुश करने के लिए ''बली देने'' की परंपरा अत्यंत प्राचीन और व्यापक है। इस परंपरा में सामान्यतः मुर्गी या अन्य जानवरों की बलि अर्पित की जाती है। इन समुदायों का यह दृढ़ विश्वास है कि बलि चढ़ाने से देवता और पुरखे प्रसन्न रहते हैं, जिससे उनका आशीर्वाद बना रहता है और जीवन की सभी परेशानियाँ दूर होती हैं।

''बच्चे के जन्म के समय पूरे गाँव और घर की पवित्रता के लिए भी बली दी जाती है। जन्म, विवाह और मृत्यु जैसे अवसरों पर विशेष धार्मिक अनुष्ठान किए जाते हैं जिनमें शुद्धिकरण, बलिदान और जातीय भोज जैसी प्रक्रियाएँ शामिल होती हैं। एक आम धारणा यह भी है कि पूर्वजों का पुनर्जन्म उसी कुल में होता है, इसलिए उनके सम्मान में विशेष रीतियाँ निभाई जाती हैं।''10

उदाहरणस्वरूप, उराँव जनजाति में नामकरण के समय एक विशेष प्रक्रिया अपनाई जाती है जिसमें एक स्थान पर जल और दूसरे पर चावल रखा जाता है। चावल के प्रत्येक दाने पर पूर्वजों के नाम लेकर उन्हें पानी में छोड़ा जाता है। जिस पूर्वज के नाम का दाना बच्चे के नाम वाले दाने से मिल जाता है, उसी नाम को बच्चे को दे दिया जाता है।

गंजू लाल सदक मराण्डी अपने लेख ''आदिवासी और आदि धर्मः एक आत्ममंथन'' (प्रभात खबर, 21 मई 2015) में लिखते हैं कि "आदिवासी संस्कृति में प्रकृति के हर तत्व- जैसे पहाड़, नदी, और जंगल को ईश्वर का प्रतीक माना जाता है। उनका यह भी विश्वास है कि मृत्यु के

बाद आत्मा वापस घर लौटती है, और इस हेतु विशेष अनुष्ठान किए जाते हैं ताकि उसकी छाया का स्वागत किया जा सके।"11

निष्कर्ष-:

इस प्रकार इनके धार्मिक दृष्टिकोण में कोई मध्यस्थ की भूमिका नहीं निभाता- न कोई पुजारी, न कोई पैगंबर। व्यक्ति स्वयं सीधे अपने देवी-देवताओं से जुड़ता है। आदिवासी धर्म में जीव-जंतु और निर्जीव वस्तुओं तक के साथ समता, सहअस्तित्व और पारंपरिक सम्मान की भावना प्रमुख होती है।

यह एक ऐसा धर्म है जो किसी अवतार, मसीहा या दैवी नायक पर नहीं, बल्कि सीधे प्रकृति और जीवन के मूल तत्वों से जुड़ा होता है। भारत के करोड़ों आदिवासी इसी सोच और जीवनशैली के अनुसार सदियों से धार्मिक और सामाजिक आचरण करते आए हैं।

संदर्भ-:

1. डॉ0 भोजराज द्विवेदी, हिन्दू मान्यताओं का धार्मिक आधार, डायमंड बुक्स दिल्ली, सं0 2017, पृ0 27
2. डॉ0 किरण टण्डन, भारतीय संस्कृति, इस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली, सं0 2000, पृ0 93
3. मंगल सिंह मुण्डा, छैला सन्दु, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, सं0 2023, पृ0 179
4. विनोद कुमार शुक्ल, गायब होता देश, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, सं0 2025, पृ0 106
5. रमणिका गुप्ता, आदिवासी कौन, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, सं0 2017, पृ0 32
6. राजीव रंजन प्रसाद यश पब्लीकेशन 'आमचो बस्तर', नई दिल्ली, सं0 2012, पृ0 102
7. स्नेहलता नेगी, आदिवासी समाज और साहित्य, अनुज्ञा बुक्स, शाहदरा, दिल्ली, सं0 2021, पृ0 56
8. संजीव, धार, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, सं2018 0, पृ92 0
9. राम दयाल मुण्डा, आदि धरम, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, सं0 2009, पृ0 106
10. गंजू लाल सदक मराण्डी, आदिवासी और आदि धर्मएक आत्ममंथन :, प्रभात खबर, 21 मई 2015

Disclaimer/Publisher's Note:

The statements, opinions and data contained in all publications are solely those of the individual author(s) and contributor(s) and not of JNGBU and/or the editor(s). JNGBU and/or the editor(s) disclaim responsibility for any injury to people or property resulting from any ideas, methods, instructions or products referred to in the content.